भूमिका

मैं मिश्र ब्राम्हण सिंगराने नई गढ़ी के दक्षिण दो कोस पन्नी ग्राम परगने मऊ राज्य रीवा पर सम्बत् १९२७ में उत्पन्न हुवा श्री अयोध्या जी में श्रीमहाराज रामाधीन शरण जी के शरण होकर सम्बत् १९४२ में गुरु मंत्र पाया और विद्या लाभ भी उन्ही महाराज से करके सम्बत् १९५२ मे चित्रकूट आया कुछ दिन श्री जानकी कुण्ड मे रह कर फिर प्रमोदवन बास करता रहा सम्बत् १९६२ मे मैहर आया बैसाख सुदी पूर्णमासी सम्बत् १९६३ को महन्ती अखाड़े श्री राम सखेन्द्र का भार मेरे शिर पर श्रीमान् राजा रघुवीर सिंह जू देव ने धरा श्रीमान् राजा यदुवीर सिंह साहब बहादुर ने सम्बत् १९६४ में मौजा डेल्हा स्थान का बहाल करके मेरे लिये रकम सिवाय बिलकुल माफ कर दिया और अखाड़े श्री गोपाल बाग व मौजा गिरगिटा का इन्तजाम जो वहां के बन्धेज में जेष्ठ बदी ६ सम्बत् १९६८ में चढ़ा है व सबब कोई महंत न रह जाने के बिगड़ रहा था मेरे सुपुर्द कर दिया कुछ बन पड़ी सेवा दोनो जगह की किया श्रीमान् राजा बृजनाथ सिंह जू देव ने बसंत पंचमी माघ सम्बत् १९७१ में मुझ से गुरु मंत्र लेकर मेरा आदर बढाया

सवैया — हे प्रभु श्री वृजनाथ महीपति की मति सुन्दर नीत मई कर ।
श्री रघुवीर नरेश पितामह के समहोंय सुखी वसुधा धर ॥
सिद्ध मनोर्थ हैं सबही यह आसिर्वाद फुरै नित मैहर ।
भाषत राम रँगीले यही मन रामहि रंग रँगै सुखमा धर ॥

सवैया — प्रेमहि ते रचना जगकी अरु प्रेमहिं ते प्रभु की प्रभुताई ।
प्रेम प्रसन्न करै सबको नित प्रेमहि श्री हरि को प्रगटाई ॥
प्रेम बिना कछु स्वाद नही कहुँ प्रेम अनूप कहो नहि जाई ।
प्रेमहि की रसरी कसिके उतते इतको स्वहिं वर्वस लाई ॥
सोरठा — प्रीत पुनीतम पाल , प्रेम प्रजा पर पुत्र वन ॥
सोई सुखी भुआल , नीत रीत जो राखहीं ॥

दोहा — प्रेम मानके फाँस फँसि रगे राम के रँग ।
राम रँगीले शरण हूँ आये शारद संग ॥

श्री वैष्णव पं० कमलाशरण

स्थान मैहर (विन्ध्य प्रदेश)

❀ जय श्री मन्नृत्य राघवाय नमः ❀

श्री १०८ श्री मद्राम सषेन्द्र कृत

दोहावली

नैन अलौकिक कमल लखि , राम अलौकिक भानु ॥
राम सखे फूले कमल , रवि लौकिक इम जानु ॥१॥

लगत राम प्रिय रवि चखन , कुल नातौ अति मान ॥
राम सषे मन चँद सँग , लगे लगो दृग जान ॥२॥
मुरझी युवती हृद कमल , विरह चँद्र दिन लेख ॥
राम सखे फूले कमल , साझ अब धरबि पेख ॥३॥
टेढ़ी जुलफन अवधनृप , बाँधे पेचन माह ॥
रामसषे यह छवि निरखि , बढ़ै सखिन रस चाह ॥४॥
अंजन निश दीजै दृगन , भये मुनिन चितचोर ॥
राम सषे अब अवधतिय , बचै न बृद्ध किशोर ॥५॥

दो०- मुकर कपोलन रामके , पीक दिखाई देत ॥
राम सखे सुख को समय , ऐंच चित्त को लेत ॥६॥
राम सखे लखि राम दृग , समर समर सर पीन ॥
वन वन में चारो दुरे , कँज खँज मृग मीन ॥७॥

❀ अर्थ ❀

रघुनाथ जू के नेत्र कामदेव के शर के समान है जलम् वनम्-जलरूपी वनमे कमल और मछली छिपे वनमे मृग और खँजन का निवास हुआ ॥७॥

दो०-जात बिक्रतकी बिक्रतता , गणै को फल स्रुति चार ॥
राम सखे तब लाल की , लगे दृगौदी मार ॥ ८ ॥
नक मुक्ता रघुराज के , राजत अतिहि विशाल ॥
रामसषे जनु कमल पर , उदय भयो कवि हाल ॥९॥
दृगन बचाय ! बचाय गुलाब को , डारो बाकी ओर ॥
रामसषे यह नव वधू , तुम नव अवध किशोर ॥१०॥
प्रीत रीति अति कठिन है , कहिवे की कछु नाहि ॥
रामसषे जा तन लगी , सो जाने जिय माहि ॥११॥

हम तुमकोतन मन दियो . तुम न लखी यह प्रीति ॥
रामसषे का कीजिये ' देखो यह अन रीति ॥१२॥
तन जो हमारो फिरत है—मन हमरो तुम पास ॥
रामसषे विनु तन मिले—यद्यपि मनु जू दास ॥१३॥
तुम हमसे रूठें रहत—हम तुम्हरे आधीन ॥
रामसषे नहिं चाहिये—ऐसी तुम्है प्रवीन ॥१४॥
अवध नगर ते आयके—चित्र कूट की खोर ॥
रामसषे मन हरि लियो— सुन्दर युगुल किशोर ॥ १५ ॥

बड़े बड़े नयना मारने , घूर घुर वारे पार ॥
राम सषे मन बस गयो , सुन्दर राज कुमार ॥१६॥
रतन क्रीट कटि पीत पट , कर धनुही अरु तीर ॥
राम सषे मन वसत नित , बनमाली रघुबीर ॥१७॥
काम शृङ्गार विहार को , मूल अवध पति रूप ॥
श्याम राम पुनि धनुष धर , रामसषे पुनि भूप ॥१८॥
सुर्पनखा अरु मुनिन को , मोह्यो चित्त कठोर ॥
राम सषे ता रूप की ,नकल काम चित चोर ॥१९॥

रूप अवधि दशरथ सुवन ' दण्डक वन पगु धारि ॥
राम सपे त्रिन वकल धरि ' करे सकल मुनि नारि ॥१०॥
अस्त्रनि घस्त्रिनि पद नटनि ' सोहैं सिय रघुवीर !!
राम सपे अँकित शिलन ' मँदाकिन के तीर ॥११॥
"बैठके नाचना घिसल के नाचना पद से नाचना"
जपत कँज श्रग भृँग ले- तुल्य होन जल माझ ॥
राम सबे सिय मुख निरख- पुनि सकुचत नित साझ॥१२॥
अर्थः-भ्रमर रूप माला जोहै तिसको लेकर कमल जल

में प्रवेश करके वैदेही जी के मुख की समता होने के वास्ते जब तुल्यता नहीं देखता है तब शाम के सकुच कर सँपुट हो जाता है ॥ २२ ॥

❀ दोहा ❀

वार वार हित तन धरत – वर अगिन मझार ॥
राम सखे सिया अँग द्युति– लहत न तऊ अपार॥२३॥
दाड़िम की छाती फटी– दामिन दुरत लजाय ॥
राम सखे सिय दँत लखि–मुक्ति परे जल धाय !!२४!!

रामसखे सिय बदन की—उपमा देवे काज ॥
गढ़त मिटावत आजु लगि-शिल्प ताज उड़ राज ॥२५॥
रामसखे सिय वदन सो-तौल्यौ विधि तव सौम ॥
तारा सब अहड़ा धरे -तऊ गयो शशि व्यौम ॥२६॥
राम सखे प्रिय दृग पलन- तौली सिय छवि मार ॥
भई मौह गाढ़ी कुटिल-सहि न प-यो अति भार ॥२७॥
जुल्फैं छोड़े बदन पर- मारत राम सुजान ॥
राम सखे अब क्यो वनै- जप तप संयम ध्यान ॥२८॥

जिनके हिय पिघले नही- देखि रूप सुन तान ॥
रामसखे तजिये तुरत- वे नर महा पखान ॥ २९ ॥
काम क्रोध अरु लोभ हूँ, तजे होत कछु नाहि ॥
राम सखे दृग राम के, लगे न तो दृग माहि ॥३०॥
यहाँ रूप की चोट को, करे नही दृग कोट ॥
राम सपे प्रभु रूप की, सो कह जाने चोट ॥ ३१ ॥
मिलै द्रव्य पुनि अर्ग लगि, मिलै नृपति अति चाह ॥
राम सपे जग रसिक सँग, यह दुर्लभ कलि माह ॥३२॥

जाग्रत सम सुख रसिक सँग, स्वपनो जग सुखसंग ॥
राम सखे अस समझ ही, जे बूडे हरि रंग ॥ ३३ ॥
रसिकन के ढिग बैठि के, कर न सकत विधि सान ॥
राम सखे जे जगत जिय, तिनको कौन प्रान ॥ ३४ ॥
मिले सजीवन ज्ञान सुख, और राज्य भरपूर ॥
समुझे विना उपासना, राम सखे सब भूर ॥३५॥
ग्वाल भेस चित चोर हरि, हद्द सुपुन नृप भेष ॥
राम सखे याते भजत, रघुवर नाम विशेष ॥ ३६ ॥

सीता राम विवाह ते, नातो भयो उदार ॥
रवि वंशिन के लगत है, निमि वंशिन सब सार ॥३७॥
लोभी इष्ट न मानही, निर लोभी के प्रान ॥
तज्यो विवर प्रभु यादवन, गहिलायो हनुमान ॥३८॥
सुनि यदु वंशिन मणि कथा—राम सखे मन खेद ॥
लोभ समान न पाप कछु, करत भक्त मे भेद ॥३९॥
मणि समँत हित यादवन—प्रभु सो फ—यो अभाव ॥
राम सखे जे अपर जिय—तिनको कोन उपाव ॥४०॥

सिय को जिन संकट हरयो—उतर समुद्र अपार ॥
राम सबे ताके शरण—मिटत सकल दुख भार ॥४१॥
परा प्रकिति मकार सिय—रेफ पुरुष पर राम ॥
राम सखे अपरा तजै—सो पावै निज नाम ॥ ४२ ॥
राम भजे दोऊ मिलें—भुक्ति मुक्ति जग माहि ॥
राम सखे सो पेखिये - भुसुंडि विभीषन पाहि ॥४३॥
परा चीन वरही नृपै—भये यज्ञ जिय काल ॥
जे भच्छन हित हतत है— तिनके कौन हवाल ॥४४॥

मंत्र राम तारक विना - तरै न जिय जग जोय ॥
राम सखे त्यौ नृपति को, यश न नीति बिनु होय ॥४५॥
राम नाम मारग सुखद , रसिकन को पर चार ॥
राम सखे सब की अवधि , जात अवधि भवपार ॥४६॥
विषय भोग जग स्वप्न वत , समुझि परै मन माह ॥
राम सखे भजु राम को , वन प्रमोद द्रुम छाह ॥४७॥
कहाँ योग कह भोग सुख , कहाँ द्रव्य संचार ॥
प्रभु सो जो अन्तर करै , सो सब डारय भार ॥४८॥

समुझत नहिं धन अँध जे ' अपनो क्षेम अक्षेम ॥
राम सखे को नेम यह ' तिनसो करतन प्रेम ॥४९॥
राज समर्पन करै सब, कोउ नृप सहित निकेत ॥
तारक मँत्र दिये विना , राम सखे नहिं लेत ॥५०॥
रसिक गुरुन प्रभुं रास हित, खर्चत द्रव्य डरात।
अति उदार सुत सुता हित, ते ठग भक्त दिखात॥५१॥
जाको आँखिन पीरिया, रोग रह्यो अति छाय ॥
राम सखे ताको सबै , स्वेत पीत दर साय॥ ५२ ॥

ब्रम्ह जीव के बीच में, जब लगि माया आड़ि ॥
राम सखे तब लगि नहीं शुद्ध प्रेम की चाड़ि ॥५३॥
राम सखे यह जगत सुख, गंगा कैसी धार ॥
छिन छिन औरहि और जल, ताको करो विचार ॥५४॥
सत गुरु तट तरु को गहै, कुटुम्ब नदी भय खाय।
राम सखे ठहरात तब, सकै न धार बहाय ॥५५॥
जो जिय यह जग आयके, करो न घर गो लोक ॥
राम सखे सो परत पुनि 'चौरासी की बोक ॥५६॥

निज घर मानै आपनो 'अवध शहर गो लोक ॥
रामसखे तिनको लगत, जग घर अति दुख वोक ५७॥
रामसखे लघु संग सो–भई द्विविद मति हीन ॥
कुबुद्धि करी वल भद्र सो– जैसोई फल लीन ॥५८॥
पाप कुसंग पतंगं तजि– सेवक वाजि खद्योत ॥
राम सखे तव जीव को– घटो चहत उद्योत ॥५९॥
अर्थ–सूर्य रूपी रघुनाथ जी को छोड़कर कुसंग वश ॥
खद्योत रूपी माया अस्वादिक को सेवन करता है ॥५९॥

दोहाः— अन्तर टाटी कपट की- बातें कहत बनाय ॥
मिल्यौ रहै अरु न मिले- तासो कहा बसाय ॥ ६० ॥
ज्यौंलो होलो ह्वौ रह्यो - मिलि पारस पट वोट ॥
त्यों कपटी सत सँग मे- लहीं न ब्रम्ह की चोट ॥६१॥
मलया गिर के निकट रह - बाँस न लहत सुवास ॥
सुधरत नहि ज्यो निरस नर—बस संतन के पास ॥६२॥
गज मुक्तन को ढेर लखि—त्यागत गोड़ गवांर ॥
राम सबे जाने विना—पहिरत गुंजन हार ॥ ६३ ॥

जे स्वांगी जे स्वांगरत - त कह जान भेद ।
राम सखे कह सत असत—कह लवेद कह वेद ॥६४॥
घर घर डोलत उदर हित—होत जगत को दीन ॥
राम सखे यह स्वान मत-संतन को नहिं लीन ॥६५॥
संतन की चार वृत्तियाँ है अजगर, काक, सिंह, स्वान,
दोहाः—भेष मात्र को रसिक सँग- सुनत महा सुख होय।
राम सखे कहिये विलम - निज यज्ञासी सोय ॥६६॥
पात्र भेद लहि स्वातिकन - मन कपूर विष होय ॥
राम सखे तस मँत्र गति—जान परत जग जोय ॥६७॥

रहत सदा जैसे लगन, वँधन तन धन माहं ॥
राम सखे तैसे रहत, मुक्तन हरि गुरु चाह ॥ ६८ ॥
हरयो सत्य कलियुग प्रवल, व्यापी जगत अनीत ॥
राम सखे हरि गुरुन सें, रही न नेक प्रतीत ॥ ६९ ॥
कलि पंडित योगी तपी, भये रूप तद रूप ॥
राम सखे कोइ भगि वचे, पग हरि रूप अनूप ॥७०॥
भयो रासि की रैन मे, भयो दारने सँग ॥
रामसखे तो कौन गुरु, पिये रास को रँग ॥ ७१ ॥

तनक बुद्धि उद वेग मन – होय विषाद न चित्त ॥
राम सषे तब जानिये– भये राम अब मित्र ॥ ७२ ॥
वस्तु भेद समुझे विना – निव हत नही सनेह ॥
गज मुक्तन तजि क्रित्तनी– ल्यावत गुंजन गेह ॥७३ ॥
निराकार दुर तन समुझ–जैसे पुर साकेत ॥
राम सखे पर हेत ही–राम धाम एक हेत ॥ ७४ ॥
माया रहत भुसुंडि घर, राम सखे विख्यात ॥
राम धाम मायक कहत– ऐसे अधम अघात ॥ ७५॥

मुक्ति रूप सनकादि लखि - राम सखे साकार ॥
निरा कार शठ कहत हठ-विन समझे श्रुतिसार ॥७६॥
निर अवैब वृम्ह स्वास विनु- ता विनु वेद न लेख ॥
राम सखे पुनि वेद विनु-- ईश्वर पथ क्यों पेख ॥७७॥
अल्प ज्ञान यह जीव--को वृम्ह सदा सर्वज्ञ ॥
लहत भेद दिन रात को – कहत एकता अज्ञ ॥७८॥
माध्व माष्य निज द्वैत मन -मिलन द्वार हनुमान ।
राम सखे बिध सम्प्रदा - उड़पी गुरु स्थान ॥ ७९ ॥

जाँचत हनुमत राम को - जिये मिलावे आनि ॥
वृम्हा की निज सम्प्रदा- राम सखे सो जानि ॥८०॥
प्रीत चहत हरि जन सुमत-चहत न अरु मन रंक ॥
राम सखे तव प्रीत ले– मिल्यौ विभीषन अंग ॥८१॥
तनिक क्षनिक ऐस्वर्य हित-खोवत जन्म गवार ॥
राम सखे तिनको नही-सत अरु असंत विचार ॥८२॥
नाम रूप गुण तेज वल—निर्गुण धाम परत्व ॥
वदत वेद सो लहिय पुनि—रामसखे जिय तत्व॥८३॥

ब्रम्ह सम्प्रदा राम पर, मुनि अगस्त्य पर मान ॥
भूले ते नहि जानि है, वकत आनकी आन ॥८४॥
अरे शिकारी निर्दयी, करिया नृपति किशोर ॥
क्यों तरसावत दरश विनु, रामसखे चित चोर ॥८५॥
उदित इन्द्र धनु श्याम, घन देखत सावन मास ॥
रामरूप विरहिन लगत, राम सखे अति गाँस ॥८६॥
शोच अर्थ रम धात को, अवतारी सिय कंत ॥
उत्पत कर्षन आदि लगि, क्रीड़ा राम अनन्त ॥ ८७ ॥

वह बहराइच इत जौनपुर , उत गोरखपुर लखन ॥
राम सखे निज भूमि यह, मनत वेद लखि चखन ॥८८॥
इत सरजू उत गोमती, लखि मन भूमि अनूप ॥
चतुरँग दल नित सजि रमत. रामसखे हरि भूप ॥८९॥
अवध जीव गोंपुर धरे, वडे भुजन रघुवीर ॥
राम सखे सो जानही, गति भुसुंडि मति धीर ॥९०॥
जन्म व्याह मृगुपति विजय- राज गमन गोधाम ॥
राम सखे ऐसे नही, चरित्त कहूँ अभिराम ॥९१॥

राम भजत तन शुद्ध सोई, होंय कोऊ जग जाति ॥
राम सखे जाको सदा, जपत शम्भु दिन रात ॥ ९२ ॥
चित्रकूट वन कुंज में . विहरत दशरथ लाल !!
रामसखे प्रण बाँधि के – बसे सो होय निहाल ॥ ९३ ॥

श्री वैष्णव कमलाशरण स्थान मैहर

मति अभेद खँडन करन, मँडन राम स्वरूप ॥
भये न अस जग होयगे, राम सखे अनरूप ॥ ९४ ॥
राम सखे रस के लिके, रूप लालची नैन ॥
अवध विहारी लाल बिन देखै लहै न चैन ॥ ९५ ॥

राम उपासक रसिक जग , तीन काल हूँ माहि ॥
वर विराग धारन करन, राम सखे सम नाहि ॥९६॥
सव साधन को सिद्ध है, पवन प्रान जग प्रान ।
नवत सकल वाधक मिटत, जानकि जन हनुमान॥९५॥
जानकी जीवन राम प्रिय , राम सखे चित चोर ॥
प्रेम सिन्धु हृद कमल के मधुकर युगुल किशोर ॥९८
जनक नगर मे जाइके रूप- ललित रघु लाल ॥
हरे सवन के मन नयन- जानकी शरण निहाल ॥९९॥

श्री गुरु राम सखेन्द्र को-चरण कमल को ध्यान ॥
करत मिटत भव ताप सब—जानकि जन गुण खान।१००।
बहुत पतित पावन किये सुमति सुशीला नाम ॥
गुरु अनन्यता प्रगट किय- करै जगत अभिराम।१०१।
जानकि जन हनुमान सम— और देव नहि कोय !!
जनक नंन्दिनी रघुवरहि हित करि प्रगटेऊ सोय।१०२।
कौशिल्या वृत पुण्य ते - दशरथ प्रेम प्रभाव।
कौशल पुर भाइन सहित—प्रगट भयो रघु राव।१०३।

सो०-वन्दौ परम कृपाल, श्री मणि मूरति चित्र निधि।
राम सखे सिय लाल, जिन यश प्रगटेउ जगत मधि १०४
दो०-सरयू निकट अराम मधि, कुंज महल तेहि नाम ॥
जानकि जन तहरास मय, राम सिया को धाम ॥१०५॥
षट विकार को साधि कै. नाम कहैं श्री राम ॥
वृम्ह ग्लानि अनुराग सो, जाहि अवध निज धाम।१०६॥
सो०-चरण कमल शिरनाय, सिय को हिय मे ध्यायके।
मन वाँछन फल पाय, सुखी होय नर नारि सव।१०७

राम मँत्र के सुनत ही. भव सागर तरि जाय ॥
जनकि जन गुरु दयाते- दूसर जन्म कहाय १०८ ॥
चरण जानकी शरण के, शरण होत जग जौन ॥
अघ तूरण चूरण करन , परि पूरण सुख दौन ।१०९॥
रुचिर रचित केशर तिलक, सोहत भाल विशाल ॥
रेख युगुल जनु मदन सर, मध्य विन्दु छवि जाल।११०
तिलक विन्दु युग भौह मधि अति अद्भुत छवि देत ॥
मध्य राखि मणि उरग युग, कमल कूल सुख लेत १११

कि दोऊ अलि अव लीन के, मध्य इन्द्र वधु सोह ॥
कि अनँग के चाप मधि, विद्रुम छवि संदोह ॥१११२॥
कर पद ग्रीवा नैन मुख, कटि दुख सहत सुजान ॥
अगम ग्रँथ लिखि पार लहि, सठ समुझहि आसान ११३
श्लोकः—तेलध्वा राज्यं चक्रस्सुखेनवै । भविष्यंति तत-
श्चाग्रे मध्वो ज्ञान वतां वरः ॥१॥ वायु सूनोश्च व तारो
वेद वेदांगपारगः । व्यास शिष्यो महा प्रज्ञो वैष्णवानां
शिरोमणिः ॥२॥ सम्प्रदायेषु बर्य्यश्च आद्योध्वश्त दुरा

गमः । स्वेष्टदेवं रघुवरं पूजयिष्यति वै पुणः ॥३॥ ततो दास्यति शिष्येभ्यः कार्य कारण तत्ववित् । बद्रिकाष्यं महा दिव्यं ग मिष्यति सवै पुनः ॥४॥ स्थास्यति व्यास कनिटे योग युक्तैश्च सेविते । एवं परं परा प्राप्तं राघ वं सीतयान्वितं ॥५॥ मध्वा चार्य्यस्य च मठे पूजयिष्यं-ति वैष्णवाः । महात्मानो भविष्यंति पर्य्या ये तस्य चैवहि ॥ ६ ॥

श्री वैष्णव कमला शरण स्थान, मैहर ।

यजुर्वेद—

कल्प वल्ली शाखा यां तिलक परत्वं नाशा मूल मारभ्य केश यर्य्यंतं ऊर्ध्व पुंड्रं विधाय तन्मध्ये हरि द्रासार सम्भवं विंदुयो धार यति सपरं प्रियो भवति सभूण हत्यां तरति स वृह्य हत्यां तरति स मुक्ति भागी भवति ॥

॥ श्री मन्महा रामायणे ॥

भाले चरम्य तिलकं विविरेख दीप्तं रामांघ्रि विंदु महितं स च पीत मध्ये ॥ कण्ठे तथा तुलसिदाम लसत् भुजे

वै तप्तेण वाण धनुषां कित राम भक्तः ॥

॥ अगस्त्य संहितायां ॥

ललाटे धारये दूर्ध्व पुंड्रं परम शोभनम् ॥
हरिद्रा विंदु संयुक्तम स्त्रमेध फलं लभेत् ॥१॥
युग्म मुद्रा सदा धार्य्या फलोर्ध्वं युगुलं शरम् ॥
फलोर्ध्वं दर्शनाद्विप्रं ब्रह्म हत्या व्यपोहति ॥२॥

इति शुभम्